डॉ० रश्मि कुमारी
सहायक प्राध्यापिका
(कला, इतिहास विभाग)
कला एवं शिल्प महाविद्यालय,
पटना (पटना विश्वविद्यालय)
**Mobile /Whatsapp No.9155696260**
**Email Id:-rashmilily240376@gmail.com.**

# B.F.A. Vth Semester

## भारतीय चित्रकला के षडंग

वात्सयायन के 'कामसुत्र' में ६४ कलाओं का उल्लेख है | जिसमे चित्रकला का उल्लेख (आलेख्यम) का चौथा स्थान बताया है | कामसुत्र का रचना काल दुसरी या तीसरी शताब्दी ई० में बताया जाता है इससे यह बात प्रकट होती है कि जिन ६४ कलाओं का उल्लेख वात्सयायन ने संक्षेप में किया है उनका प्रचलन बहुत पहले से था | इसलिए चित्र विद्या के साथ-साथ चित्रकला के षडंग भी भारत में प्रचलित थे | जिनसे तत्कालीन समाज उससे भली भाक्ति परिचित था |

कामसुत्र के एक प्रसिद्ध टीकाकार (संक्षेपाकार) हुए है | 'यशोधर पंडित' उनकी टीका का नाम है :- 'जयमंगल' |

**Note:-** (टीका का मतलब ग्रंथों को संक्षेप में परिवर्तित करना है | )

यशोधर पंडित जयपुर के राजा जय सिंह – I की सभा के विख्यात विद्वान थे| अत: उनकी स्थित काल ११वीं व १२ वीं शताब्दी ई० निश्चित है | भारतीय चित्रकला का जयपुर एक प्रसिद्द चित्र कला का केंद्र मानाजाता है | इसलिए चित्र

विद्या के षडंगों से पूर्णत: परिचित होना यशोधर के लिए असंभव नहीं था | कामसुत्र के प्रथम अधिकरण (खंड) के दुसरे अध्याय की टीका करते हुए यशोधर पंडित ने आलेख्य को छ: अंग बताये हैं जो एस प्रकार है :-

(१) रूपभेद

(२) प्रमाण

(३) भाव

(४) लावण्य योजना

(५) साद्दश्य

(६) वर्णिका भंग

रूप भेदा प्रमानामि भावलावन्य योजनम

साद्दश्यं वर्णिका भंग इति चित्रं शडकम ||

प्राचीन भारत की चित्रकला में इन छ: अंगों की सुयोजना आवश्यक समझी जाती थी | सभी चित्रकार अपनी कृतियों में इसका पुरी तरह पालन करते थे | अजंता और बाघ आदि के गुफा चित्रों में चित्रकला के इन छ: षडंगों को बड़ी सावधानी के साथ प्रदर्शित किया गया है | इन छ: षडंगों का निरूपण संक्षेप में इस प्रकार है |

रूपभेद :- रूप का सामान्य अर्थ है किसी आकृति की वह विशेषता जो एक आकृति और दुसरी आकृति में भिन्नता अथवा भेद लाती है | भेद से

तात्पर्य – आकृति के मध्य अंतर कर पाने की क्षमता | किन्तु कला रचना के सन्दर्भ में रूप का अर्थ सामान्य अर्थ से अलग है | भारतीय दार्शनिक चिंतन में सदैव स्थूल रूप के स्थान पर अन्तर्निहित सूक्ष्म तत्व अधिक महत्वपूर्ण माना गया है| इसलिए कलाकार को बाह्य रूप की अपेक्षा हृदय या मस्तिष्क द्वारा अनुभूत रूप के अर्थ में लेना चाहिए | कलाकार में यह क्षमता होनी चाहिए जिससे वह वस्तुगत तथ्य तक सीमित न रहे | रूप के आतंरिक स्वरूप एबं चरित्र को पूर्णत: ग्रहण करके व्यक्त कर सके | वास्तव में तभी रूपभेद का लक्ष्य प्राप्त हो पायेगा | वास्तव में रूप की आंतरिक पहचान के अभाव में श्रेष्ठ रचना कर पाना संभव नहीं है |

अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने इसे एक उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया है | बालक सहित स्त्री के चित्र को हम “माँ” का चित्र तभी कह सकते हैं जब चित्रित रूप वात्सल्य के उस आन्तरिकता का बोध करा पाता हो | जो मातृत्व के लिए आवश्यक हो जैसे:- देव-दानव, माता –पुत्री, रानी-दासी |

(२) प्रमाण :- इसका अर्थ है माप अथवा मान | कला रचना अंगों में रूप के बाद प्रमाण लेना उचित है | क्यौंकि रूप को आत्मसात करने के बाद अभिव्यक्ति करने के लिए उचित अनुपात, नाप का ज्ञान अपेक्षित है |

कला रचना में प्रमाण दो प्रकार से प्रयुक्त होता है |

**(i)** समग्र स्वरूप, विभिन्न अंगों का ज्ञान एक या अधिक वस्तुओं के होने पर सबका समानुपातिक सम्बन्ध समझ पाना | यह प्रमाण का स्थूल रूप है | जैसे- आकाश, नदी बनाना हो तो |

**(ii)** दुसरे अर्थ में प्रमाण सूक्ष्म स्थिति में रहता है | रूचि द्वारा ग्रहण किये गये रूप को चित्र भूमि: मिट्टी इत्यादि के सीमित फैलाव पर अंकित करने के लिए कलाकार आवश्यकता अनुसार रूप को विस्तृत अथवा संक्षिप्त करके अंकित करता है | कोई भी आकृति कितना अंकित करने पर सुन्दर लगेगा इसका निश्चय रचनाकार हृदय में करता है |

प्रत्येक कलाकार में प्रमाण शक्ति होना आवश्यक है | प्रमाण के द्वारा ही चित्रकार मनुष्य, पशु-पक्षी आदि के मित्रता और उसके विभिन्न भेदों को समझ सकता है | पुरुष और स्त्री की लम्बाई में क्या भेद है | देवता और साधु के अंग निर्माण में क्या माप होना चाहिए, वह प्रमाण द्वारा ही. निर्धारित होता है |

(३) भाव :- भाव कला रचना का अनिवार्य अंग है | चित्र ऐसा होना चाहिए जो देखने वालों के हृदय में भी भाव पैदा कर दें | भाव का स्वरूप निर्धारण आंतरिक एवं वाह्य दो रूपों में किया जा सकता है | भाव का बिस्तार क्षेत्र हमारा अंतर्मन्य है | यह भाव का आतंरिक पक्ष है | अंतर्मन्य में होनेवाली यह हलचल शारीरिक स्थिति में

परिवर्तन लाती है |अथवा शुक्ष्म भाव शारीरिक गतिविधि या भंगिमा  के द्वारा स्थूल स्वरूप में अभिव्यक्त होता है| यह भाव का बाह्य स्वरूप है |

कला रचना में हृदय भावों को व्यक्त करने के लिए रचनाकार किसी विशेष रूप का चयन करता है तथा उस रूप को भाव से युक्त दिखने के लिए विशिष्ट भंगिमा की रचना करता है | इस प्रकार दोनों ही प्रयोजन समान रूप से महत्वपूर्ण है | विष्णु धर्मोत्तर पुराण में यह कहा गया है की चित्रकार को नृत्य के समुचित ज्ञान  की आवश्यकता है क्यूंकि नृत्य भंगिमा भाव सम्प्रेषण के लिए श्रेष्ठ विद्या है | अत: चित्रों में समान भंग, समभंग, अभंग, त्रिभंग, अतिभंग आदि हस्त मुद्राएँ एबं आसन  मुद्राएँ  आदि महत्वपूर्ण है | कला रचना में व्यंजन  के द्वारा की गई अभिब्यक्ति श्रेष्ठ मानी गई है |

उदहारण स्वरूप:- एक भिखारी के जीवन की दयनीयता एबं अभाव  के चित्रण करने में भिखारी को अंकित न करके  उसके जीवन  से जुडी  वस्तुओं का चित्रण कर चित्र को  प्रभावी बनाया जा सकता है |

(४) <u>लावण्य योजना</u> :

रूप,  प्रमाण एबं भाव के साथ चित्र में लावन्य का होना भी आवश्यक है | भाव भीतरी सौन्दर्य का बोधक है और लावन्य वाह्य  सौन्दर्य का रूप, प्रमाण, भाव में दीप्ति का प्रकाशन ही लावन्य  है, किन्तु चित्र में लावन्य  उचित  रूप में होना

चाहिए | लावण्य से युक्त चित्र को देखकर दर्शक के नेत्रों को अनोखे आनंद की प्राप्ति होती है | मस्तक पर तिलक मात्र अंकित करने से ही लावण्य बढ़ जाता है | चित्रकार अपने अनुभव एब ज्ञान के आधार पर लावण्यमय चित्र रचता है | हम इसे अजंता के चित्रों का उदाहरण लेकर समझ सकते हैं | लावण्य लाने के लिए उन्होंने चित्रों को गहने, मुकुट, आदि के द्वारा सजाया है | अजंता के चित्रकारों को यह भली – भांति ज्ञात था कि राजा एबं रानी के मुकुट एबं गहनों का चित्रण के क्या अंतर होना चाहिए | उन्हें उचित लावण्य का प्रयोग करना आता था |

(५) सादृश्य :- किसी मूल (वास्तविक) पदार्थ या भाव को उसके प्रतिकृति में मूल की समानता से दर्शित करना ही सादृश्य है | चित्र सत्य पर आधारित हो या कल्पना पर इसमें चित्रित व्यक्ति या आकृति को दर्शक तुरंत पहचान ले तो, हमे यह समझ लेना चाहिये कि सादृश्य सही है |

उदाहरण स्वरूप – किसी चित्र में बुद्ध की आकृति चित्रित किया गया है, तो उसमे.बुद्ध में पायी जानेवाली विशेषता होनी चाहिए अवनीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा है कि किसी रूप के भाव को किसी दुसरे रूप के द्वारा प्रकट कर देना सादृश्यता उत्पन्न करना माना गया है | यदि एक वस्तु दुसरी वस्तु का भाव उत्पन्न करता है उनमे. भिन्नता होते हुए भी समानता है तो यह दोनों का स्वभाव है |

जैसे :- वेणी के लहरदार होने के कारण सर्प के सादृश्य कहा गया है | उसी प्रकार बोधिसत्वपदम पाणी चित्र जो कि अजंता के चित्रों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखती है, उसमे बुद्ध के नेत्र कमल के पंखुड़ियों के सादृश्य है और उनके पैर खिला कमल के समान है | कुछ अन्य उदाहरण भी इसके अंतर्गत शामिल है:-

**(i)** तोते के चोंच जैसी नाक

**(ii)** मछली सदृश्य आँखें

**(iii)** कदली के तने के समान स्त्री की जंघा

**(iv)** सिंह के कमर के सामान पुरुष की कमर इत्यादि |

(७) <u>वर्णिका भंग</u> :-

वर्णिका भंग का अर्थ है कलात्मक ढंग से रंगों का प्रयोग | किस प्रकार के चित्र के लिए किस प्रकार के वर्णों का प्रयोग करना चाहिए तथा किस रंग के साथ कौन सा रंग आना चाहिए, ये सभी समस्याएं वर्णिका भंग के अंतर्गत आती है | बिना वर्ण साधना के ऊपर वर्णित सभी सिधांत बेकार हो जायेंगे | ऊपर वर्णित सभी सिधान्तों को वर्ण एब तुलिका ही सार्थक बना सकती है | पशु-पक्षी, आकाश, पेड़ एब जमीन आदि में किस प्रकार का रंग प्रयोग करना चाहिए यह चित्रकार को ज्ञात होना चाहिए, तभी वह एक अच्छा चित्रकार माना जायगा |

<u>उदाहरण स्वरूप</u> :-   हम अजंता के चित्रों में मरती हुई राज कुमारी के चित्र में हम यह देख सकते  है कि कथाकर ने  रंगों द्वारा चित्र को प्रभावी बनाया है |

इस प्रकार हम कह सकते हैं की चित्र कला  के उपरोक्त छ: अंग, चित्रकला के  दृष्टीकोण  में अति महत्वपूर्ण स्थान रखते है |